

धरती प्रकाशन
गंगाशहर, बीकानेर

प्रकाशक : धरती प्रकाशन, गंगाशहर, बीकानेर (राज०)/संस्करण : 1978/
मूल्य : पंद्रह रुपये/मुद्रक : विकास आर्ट प्रिंटर्स, दिल्ली-32/आवरण शिल्पी: सन्नू ।

DARD KE DASTAVEZ (Gazalen) : Sanwar Daiya. Price 15-00

आत्मकथ्य

खण्डित स्वप्न : दंशित संवेदन

मैं जो कुछ कहूँगा सच कहूँगा और सच के सिवाय कुछ नहीं कहूँगा। हाँ, तो सुनिये—
सपने देखना आदमी की कमजोरी है, लेकिन क्रूर यथार्थ की दुनिया में सपने टूटते रहते हैं। सपनों का बन-बन कर टूटना यातनाजनक होता है। न जाने कितने समय से सुखद एवं सुरक्षित भविष्य का स्वप्न बार-बार टूटता रहा है। स्मृतियों का लम्बा सिलसिला। तीस वर्षों की लम्बी यात्रा। यात्रा में कई पड़ाव। हर पड़ाव पर बदलते दृश्य।



१५ अगस्त, १९४७ !
स्वाधीनता दिवस। परतंत्रता से मुक्ति। सदियों से स्वतंत्रता का स्वप्न देख रहे भारतीयों के लिए स्वर्णिम दिवस। देश के सम्मान और स्वाभिमान का प्रतीक तिरंगा। अपना संविधान। मौलिक अधिकार। व्यक्तित्व के विकास के लिए अनेक बहुमुखी योजनाएँ।
खुली हवा और खुला आकाश। हवा में गूँजती ये पंक्तियाँ—
सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा !

फिर कई उतार-चढाव। कई आक्रमण। राजनीतिक उथल-पुथल।
और फिर—

२६ जून, १९७५!
देश में आपातकाल की घोषणा। अध्यादेश-दर-अध्यादेश। अनेक राजनीतिक दलों पर प्रतिबंध। समाचार-पत्रो पर सेंसरशिप।
चारो तरफ गिरफ्तारियो का वातावरण।
अनेक व्यक्तियो द्वारा आपातकाल का समर्थन। देश मे व्याप्त अराजकता और अस्थिरता के लिए एक अनिवार्य कदम। कर्तव्यच्युत कर्मचारियो को नींद से जगाने के लिए झटका! जनकल्याण के लिए प्रधानमंत्री द्वारा बीस-सूत्री कार्यक्रम की घोषणा!
अनेक व्यक्तियो द्वारा आपातकाल का विरोध। प्रजातंत्र के दामन से कभी न धुलने वाला धब्बा। मौलिक अधिकारों का हनन। प्रेस सेंसरशिप अप्रजातांत्रिक एवं अमानवीय। तानाशाही का नग्न नृत्य। जबरन नशबंदी। संदेहमात्र पर गिरफ्तारियाँ।
और फिर—

मार्च, १९७७!
लोक सभा चुनाव। कांग्रेस सरकार का पतन। जनता पार्टी की बहुमत से विजय। दूसरी आजादी का दावा। मुक्ति दिवस का उत्सव। नागरिक अधिकारो की पुन.स्थापना। प्रेस सेंसरशिप समाप्त करने की घोषणा।
समस्त देशवासियों को सुखद भविष्य का आश्वासन।
जाँच आयोगो का लम्बा सिलसिला।
और अब जनता पार्टी मे आतंरिक मतभेद। विघटन के आसार।
इस लम्बी यात्रा के बीच मन में अनेक प्रश्नचिह्न? उत्तर की तलाश में भटकता मन। सपने देखता मन। सपनों के टूटने से यातना झेलता मन। यातनाग्रस्त मन का दमित संवेदन। दमित मन की अभिव्यक्ति के लिए निरंतर छटपटाहट। इसी छटपटाहट का परिणाम 'दर्द के दस्तावेज'।

☐

पता नहीं क्यों, मुझे बार-बार यह लगता है कि हम अनेक बार कई निर्णय

इतनी शीघ्रता से ले लेते हैं कि बाद में हमें उन्हीं के लिए शर्मिन्दा होना पड़ता है। यही कारण है कि आदमी का गला घोंटकर, जूतों के जोर फर्शी-सलाम करवा, डण्डों के बल अदब की मुद्रा में खड़ा करने वाली स्थितियों को हमने 'अनुशासन-पर्व' का नाम बड़े गर्व से दिया था! हम भूल गये कि लाख-लाख कोशिशों के बावजूद अँधेरे को रोशनी की शक्ल में खड़ा नहीं किया जा सकता!

□

लगता है हम स्वागतप्रिय हैं।
हमने स्वतंत्रता का स्वागत किया। संतुष्ट रहा।
हमने आपातकाल का स्वागत किया। पछताये।
हमने दूसरी आजादी का स्वागत किया। मूल स्थितियों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ तो फिर सोच में पड़े हैं।
हमने जाँच आयोगों के गठन का स्वागत किया। परिणाम और उस पर होने वाली कार्यवाहियाँ देख कर हैरान हैं।
हम किसी भी परिस्थिति का स्वागत करने से पहले उसके अच्छे और बुरे पहलुओं पर गम्भीरता से विचारना कब आरम्भ करेंगे?

□

पिछले दिनों 'आपातकालीन-साहित्य' का बहुत बोलबाला रहा।
'कायरों' और 'टायरों' की खूब चर्चा हुई। वास्तव में यातना झेलने वाले भी सामने आये और अँगुली कटवाकर शहीदों की सूची में शामिल होनेवाले भी। कठपुतलियाँ भी अपने तेवर 'अब' दिखा रही हैं और नये दरबार में नया नृत्य पेश कर रही हैं।

कहते हैं, कुछेक 'समझदारों' ने पुरानी डायरियाँ खरीदीं। उन डायरियों में अट्ठारह महीनों के यातना शिविर' का आँखों-देखा हाल लिखने लगे। साथ ही अपनी वीरता की गाथाएँ भी!

कुछेक स्वर निरंतर साधनारत थे। भवानीप्रसाद मिश्र 'त्रिकाल संध्या' करते थे। कहते हैं 'चार कौवे उर्फ चार हौवे' एक पत्रिका को (माँग पर) भेजी और

स्वीकृति मिलने पर 'सम्पादक की समझ' पर पुनर्विचार कर उसे समझाया कि बच्चों के स्तम्भ के लिए भेजी यह कविता कितनी खतरनाक है !

समझ में न आने तक ही कविता मजा देती है ? समझ में आते ही खतरनाक बन जाती है ! कविता को हथियार बनाना है तो उसे समझ में आने योग्य भी बनाना होगा।

अमूर्तता और सपाटबयानी के प्रश्न इन्हीं संदर्भों में जाँचे-परखे जाने चाहिए, मेरा ऐसा विश्वास है।

□

अपनी इन रचनाओं के बारे में कहना चाहूँगा कि ये न तो कहीं से पुरानी डायरी खरीद कर लिखी गयी हैं और न ही किसी 'त्रिकाल सध्या' के रूप में। आजादी की खुली हवा में भी 'दर्द के दस्तावेज' तैयार हुए हैं और इक्कीस महीनों के दम-घोटू वातावरण में भी। कुछ रचनाएँ दूसरी आजादी की हवा में भी लिखी हैं। दर्द पहुँचाने वाले क्षण जब भी आये हैं, वे कुछ-न-कुछ देकर ही गये हैं।

रचना की अस्वीकृति सामान्य बात है। लेकिन 'खेद' के साथ 'अभिवादन' का जो छद्म है, वह विचार योग्य है।

इन शरीफों की भाषा के पेंच देखो।
भेज रहे अभिवादन सहित खेद देखो !

[अभिवादन सहित खेद व्यक्त करना वैसा ही है जैसे कि 'विमान जलकर राख हो गया और बचाव-कार्य चालू है' वाले समाचार !]

लोकनायक की निरंतर उपेक्षा और राजनीति के क्षेत्र में घुटनों के बल चलना सीखने वाले को 'युवा हृदय सम्राट्' के रूप में स्थापित करने की घटनाएँ हृदय में नश्तर-सी चुभती रहीं और कागज पर ये पंक्तियाँ उभर आयीं—

आलमे आफताब तो है चिरागे-सहरी।
आपके चिराग अब आफताब हो रहे हैं !

लेकिन स्पष्ट कर दूँ कि इस यातना के साथ किसी प्रकार के 'भूमिगत' साहित्य का फतवा नहीं है। जैसे राह चलते हुए पाँव में कील चुभने पर दर्द होता है, वैसे ही उन बड़े-बड़े पोस्टरों को देखकर हुआ था !

गलत और निरर्थक परिणाम वाली घटनाएँ सदा यातना पहुँचाती रही हैं। फिर

वे चाहे आपातकाल से पूर्व की हों या पश्चात् की अथवा स्वयं आपातकाल की ! दर्द जब भी हुआ, मुखरित होकर रहा ।
राजनीति में हवा का रुख देखकर चलने वालों के लिए—

देखते चलते पलड़ा किधर भारी,
कभी इधर तो कभी उधर गये लोग !

और उधर मूल समस्याओं से हटकर जाँच आयोगों में मग्न व्यक्तियों को देखकर जो दर्द हुआ, वह यह है—

देख देख कर रोज नये जाँच आयोग,
शायद कुछ दिन और बहल जायेंगे लोग !

ये रचनाएँ जब 'कद्रदानों' की आँखों के आगे से निकली तो वे रसीद बुक लेकर आ पहुँचे और 'प्रगतिशील लेखक संघ' का सदस्य बना ले गये । मेरे लिए जो दर्द छोड़ गये, वह यह था—

मंच पर घोषित हुआ प्रगतिशील,
घर में पुराने रिवाज चालू है !

घर का ज़िक्र आया है तो उससे जुड़ी यातना भी सामने रख दूं । अशिक्षा और जड़ संस्कारों की हवा में नये मूल्य क्या अर्थ रखते हैं, कहने की आवश्यकता नहीं है । मैंने वहाँ बढ़ती हुई आवश्यकताएँ और साधनों की अल्पता देखी है । स्थान का अभाव इस हद तक कि मिलने आये व्यक्ति के साथ बैठकर बात करना दूभर । किसी के आते ही उसे लेकर होटल की तरफ लपकना पड़ता है । शर्मिन्दगी का यह सिलसिला आज भी विद्यमान है !
शायद इसी स्थान के अभाव ने कहानियों से कविताओं की ओर लौटा दिया है । कहानियाँ पूरी बैठक माँगती हैं । इसके लिए एक भी एकांत कोना नहीं है । कविता तो छत पर टहलते हुए या घर के सामने लगे नीम के वृक्ष को ताकते हुए उपजे तो उसे सहेजा जा सकता है और रास्ते चलते स्फुरित विचार को डायरी में लिखकर भी !
लगता है, सिर्फ सुविधाएँ ही नहीं, असुविधाएँ और अभाव भी अपना रास्ता खोज लेते हैं !

□

जब-जब भी इन रचनाओं से फिर-फिर गुजरता हूँ तो लगता है कि इनके मूल

स्वर में कोई विशेष अंतर नहीं है। घूम-फिर कर वही-वही सन्दर्भ उजागर होते रहे हैं। इसका अर्थ कहीं यह तो नहीं कि हमारे जीवन की मूल परिस्थितियों में मोटे रूप से कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है—स्वतंत्रता के तीस वर्ष बाद भी! आम आदमी के सामने हर रोज जीने-मरने का संकट विद्यमान है। जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की अपूर्ति से उत्पन्न कुंठा, क्षोभ, अविश्वास और हताशा ने जीवन-गति को अनेक बार अवरुद्ध किया है। इन समस्याओं के हल न होने के पीछे राष्ट्रीय चरित्र का अभाव स्पष्ट है। कुछेक लोगों ने अपने सुख की इमारतें लाखों के दुःख पर खड़ी कर रखी हैं।

वे लोग सचमुच महान् है जो अपने 'सुख' से दूसरों के 'दुःख' तक पहुँचते है। सुख का त्याग करने वाले बड़े होते हैं। लेकिन मैं अकिंचन व्यक्ति, एक लेखक की हैसियत से 'अपनी यातना' के माध्यम से 'आपकी यातना' से जुड़ना चाहता हूँ। जब तक यातनाग्रस्त व्यक्ति हैं, तब तक यह जुड़ाव की प्रक्रिया निरंतर रहेगी। जिस दिन सभी व्यक्ति यातना-मुक्त हो जायेंगे, उस दिन मौसम की बातें अच्छी लगेंगी। चाँद-तारों की बातें करने का आनन्द आयेगा। फूलों की सुगन्ध स्फूर्ति का संचार करेगी। हवाओं में लहराते आँचल को पकड़ने के लिए गीत फूटेंगे!

लेकिन आज?

आज तो ये आँसू है। यह दर्द है। यह घुटन है।



कुछ स्वीकारोक्तियाँ

मनुष्य के रूप में, मनुष्य के प्रति प्रतिबद्धता ही हमारा धर्म है। जो जीवन को सकारात्मक दिशा में गति प्रदान करे, वह कहीं भी हो, मुझे स्वीकार्य है।



पक्ष और विपक्ष की भूमिका निरंतर चुनौती बनकर सामने आती है। हमें सुविधाएँ प्राप्त करनी हैं अथवा सत्य की अभिव्यक्ति? सुविधाएँ प्राप्त करने वालों और सत्य की अभिव्यक्ति करने वालों की कतार निश्चित रूप से एक नहीं हो सकती। हम सत्य अथवा सुविधा में से किसका चयन करते हैं, इसी पर हमारी आगामी भूमिका निर्भर करेगी।

□

मैं गजल की बारीकियाँ नहीं जानता, फिर भी गज़लें लिखी है।
मैं गजल 'पेश' नहीं कर सकता, सिर्फ पढ़ता हूँ।
कहीं-कहीं गजल के नियमों की अवहेलना भी हुई है।

□

मधुमति, गवाह, यथार्थ, युगदाह, युवा हस्ताक्षर, ललकार तथा अभयदूत आदि पत्र-पत्रिकाओं में कुछेक गजलें प्रकाशित हुईं। सराही गयी तो लिखने का हौसला बढ़ा।

□

और अंत में

इस 'दर्द के दस्तावेज' में सिर्फ मेरा दर्द है तो इसकी कोई सार्थकता नहीं। अगर कहीं आपका दर्द भी शामिल हुआ है तो समझूंगा कि मैं अपने समय की यातनाओं से कटा हुआ नहीं हूँ। आपकी सम्मति की प्रतीक्षा रहेगी।

जेल रोड
बीकानेर (राज०)
३३४००१

—सांवर दइया

अपनी बात

मेरे ख़ातिर सांस का एतबार है ग़ज़ल।
अंधेरे के ख़िलाफ़ तेज हथियार है ग़ज़ल।

बिचौलियों से बात नहीं टाल सकते आप,
रू-ब-रू जवाब मांगने को तैयार है गजल।

रोटी का अर्थ रोटी ही रह गया जनाब,
बदचलन शब्दों से अब ख़बरदार है गजल।

सिक्कों की एवज कैसे रख दें जुबां गिरवी,
हमारे लिए जीने का आधार है ग़जल।

हवा क़ैद करने की साजिश करते हैं जो,
उन जालिमों के ख़िलाफ़ ललकार है ग़ज़ल।

ठोकर मार कर बच नहीं सकते आप,
बर्फ़ का घरौंदा नहीं, अब अंगार है गजल।

कोने में ले कुछ कहने की जरूरत नहीं,
जनाबेआली! अब खुला दरबार है ग़ज़ल।

सिर्फ़ अपने ही दो आंसुओं का जिक्र नहीं,
ज़माने भर के दर्द का अखबार है गजल।

फिर-फिर पूछिये, लेकिन अपना जवाब यही,
खुली हवा, रोशनी, फस्ले-बहार है ग़जल !

गर्म हवाओं में फिर निकला आज अकेला,
सदा की तरह मेरे साथ, इस बार है गजल!



सच कहता हूँ मेरी तकलीफ़ यही है।
जिस वजह से आज मैंने ग़जल कही है।

वहां तो लग रहे हैं शौक़िया निशाने,
यहां क़दम-क़दम पर सांस सिहर रही है।

आदिम सुविधाओं के नक्शे फैल रहे हैं,
तिल-तिल कर बटोरी आग बिखर रही है।

हवा तक का रुख बदलने वाली ताक़त,
नीले रंग में सकून तलाश रही है।

जिन सूखे होठों के लिए की तपस्या,
वहां पहुंचे बिना ही गंगा मुड़ रही है।

□

सोचते थे पखेरू आओ चलें कहीं उड़कर।
पहली उड़ान भरते ही लगा, अच्छे थे घर पर।

यहां तो कोई किसी से बात ही नहीं करता,
कितने अच्छे थे वे लोग जो मिलते थे हँसकर।

बस अपने ही खातिर हो यह सुख भरी जिन्दगी,
लगता है मर जायेंगे इस खुली हवा में घुटकर!

लगता है हर कोने में लगी है आग भारी,
जिसे देखो, कहता है रहना जरा सँभलकर।

हर रोज नया उड़ानें भर क्या हो जायेंगे,
सभी सोचते हैं यहां माथे पर हाथ रखकर!

□

इन दरवाजों पर खुशहाली जरा दस्तक दे तो देखूं।
काली कोठरियों तक सूरज जरा किरण दे तो देखूं।

ज़हन में अब भी उभरती है तेरे हुस्न की तस्वीर,
रंजोग़म की मारी दुनिया जरा फ़ुरसत दे तो देखूं।

गुल भी खिलते हैं बाग़ों में, पुरवैया भी चलती है,
तपती जमी, गर्म हवाएं, जरा राहत दे तो देखूं।

पके धान की सुगन्ध कहीं जरूर है इस हवा में,
तलाशे-रोटी गये क़दम जरा आहट दे तो देखूं।

आकाश के साथ-साथ मन में भी बनते हैं इन्द्रधनुष,
इन बदरंग क्षणों से वक्त जरा फुरसत दे तो देखूं।



कैसे-कैसे तमाशे दिखा रही रोटियां।
आदमी को सुबह-शाम नचा रहीं रोटियां।

मत पूछो कहां-कहां बिके लिबास के लिए,
अब लिबास में नंगापन दिखा रहीं रोटियां!

भूख ने दिखाये हमको ये करिश्मे आज,
चांद-सूरज तक में नजर आ रहीं रोटियां!

आप ही कहिये, कैसे कोई ख्वाब बुनें,
सोने से पहले हमें जगा रहीं रोटियां।

किताबों में तलाशें तो शायद मिल जाये,
दुनिया से आदमी अब मिटा रहीं रोटियां।

□

आज हम दोनों सोचें, कुछ ऐसा करें।
हवा में उड़ना छोड़, जमीं पांव धरें।

लौट सकती हैं आज भी सब खुशियां घर,
आओ, मिलकर हम उसे बेनक़ाब करें!

झख मार कर यहीं बरसेंगे ये बादल,
अपने भीतर इतनी तपन इकट्ठी करें।

सदा कब रहती है यह आंधी-बरसात,
मौसम देखें, पर तोल कर उड़ान भरें।

बहुत लड़ चुके हम अलग-अलग लड़ाइयां,
मरना ही है तो अब क्यों न साथ मरें!

□

आपका भी इन्तजार है, मिलिये दयानतदारों से।
बड़े-बड़े काम हो जाते हैं बस उनके इशारों से।

जब उनसे मिलने निकले तो बहुत भारी लग रहे थे,
लौटे तो सदा को हलके थे हवा भरे गुब्बारों-से!

वातानुकूलित आवासों से लौटकर आये हैं वे,
उनकी आवाज नहीं खुलेगी पानी के गरारों से!

दवा लाने भेजा था, वे दावत में शरीक हो गये,
अब वे नही मिलेंगे अपनी बस्ती के बीमारों से!

उनके काम का आदमी कभी भी खाली नही लौटा,
जो मिलने गया, बरी हुआ छोटी-मोटी उधारों से!

□

ढेला चाहे मत फेंक, हाथ में तो ले ले।
काम आयेगा कभी, साथ में तो ले ले।

यह भी सीख लेगा यहां के तौर-तरीके,
आज इसे अपनी जमात में तो ले ले।

इश्तिहार बना उनके न चिपका चाहे तू,
उनका नाम अपने बीच बात में तो ले ले।

उनकी अपनी ताक़त का हो जाये अंदाज,
इस बार मुकाबला मैदान में तो ले ले।

तू आग से नहीं, यह आग डरेगी तुझसे,
बस, एक बार अंगारा हाथ में तो ले ले !



सूनी दिखती सड़कें, चुपचाप हवाएँ बहती हैं।
कौन समझेगा आज खामोशी भी कुछ कहती है।

मायूस न हो यहां आग की उम्मीद रखने वाले!
लाख चढ़े राख, अंगारों में आंच मगर रहती है।

टूट जाते हैं सदियों से अडिग खड़े किनारे भी,
तूफान के आगोश में पल लहरें जब बहती हैं!

पांवों तले रौंदने वालों से है गुजारिश यही,
देखो, धरती भी सहने की हद तक ही सहती है!

यह हवा, यह आकाश कैद न करो सियासत वालो!
परवाज भरती चिड़िया न जाने कब से कहती है।

□

इतिहास के ये कौन से छंद है ?
आज कारखाने, कल शहर बंद हैं !

सांझ के कुहासे को क्या दोष दें,
दिन में सूरज फैला रहा धुंध है।

खुली हवा मांगने गये तो देखा,
दयानतदार दुनिया बहुत तंग है !

अपनी नीतियां कभी बताते नहीं,
गालियां उगलते आज सब मंच हैं।

एक-दूसरे को लतिया रहे सभी,
चारों तरफ फैल रही दुर्गंध है।



हमें पूछो, हम बतायेंगे जो हुआ वहां।
उठ खड़ा हुआ बहस को कौन-सा मुद्दा वहां!

कहा यही कि नीचे कोसों बिछी है बालू,
लेकिन निकल आया एक मीठा कुआं वहां।

समर्थन में हाथ उठाने बुलवाया जिन्हें,
सामने तान चले मुट्ठियां, यह हुआ वहां!

जलसे से घर पहुंचना भी हो गया मुश्किल,
बात ही में हवा का रुख ऐसा हुआ वहां।

वे कहते है कोई वारदात नही हुई,
आप चलकर देखें, उठ रहा है धुआं वहां!

□

आज सरेआम घोषणा कर रहे आप।
नयी सुबह लाने का दम भर रहे आप।

आवाज़ तो आती, लेकिन खुलकर नहीं,
लगता भीतर कहीं जरा डर रहे आप।

न जाने कितने चूल्हे उखड़ जायेंगे,
सोचें तो सही, यह क्या कर रहे आप!

राख हटी तो खिल उठेंगे ये अंगारे,
शौक़िया फूंक मार गजब कर रहे आप!

यक़ीन तो है न भोर के घर जायेगा,
जिस रास्ते से सफ़र तय कर रहे आप?

□

पीछे हटने का कोई कारण नहीं जब हम ठीक है।
टूटे बेशक हजार, अगर टूटतो आपकी लीक है!

अनजाने में नहो हुआ इन हाथों शुरू यह सिलसिला,
जानते है आदमी को जगाने की सजा सलीब है!

चलो, रात के घर टांग आते हैं आज यह इश्तिहार,
बस, दो कदम चलने के बाद भोर हमारे करीब है!

जब राख चढे अंगारों ने सोचा, चलो आंखें खोलें,
सबसे पहले चल दिये थे वे, जो आपके मुरीद हैं!

कल मैं नहीं तो किसी और के हाथ में होगी मशाल,
रोशनी नहीं बुझ पायेगी, अब इतनी तो उम्मीद है!

❑

यहां सरेआम उनकी इनायत अब भी है।
पर दिलों में ठनी हुई अदावत अब भी है!

अमल हो रहा है आवास योजनाओं पर,
धरती आंगन और आकाश छत अब भी है!

वे कहते-झूठ बोलो तो खिताब दिला दें,
पर क्या करें, सच कहने की आदत अब भी है!

घोषणाएं तो हो चुकी कर्फ्यू उठने की,
क़दम-क़दम पर मन में दहशत अब भी है!

शराफ़त का तो सिर्फ जामा पहना है ऊपर,
सड़ांध देता तालाबे-वहशत अब भी है!

□

अपनी जिन्दगी का हमेशा यह आलम है।
सुबह मिले राजी खुशी, शाम को मातम है!

अब किस नाम से पुकारें इन लम्हों को हम,
अभी थिरकती थी हँसी, अभी आंखें नम हैं!

इस तरह रहे वे हम पर मेहरबान सदा,
महफ़िल में मुहब्बत जाहिर, घर में सितम है!

वे ऐलान कर चुके अब पाबन्दियां नहीं,
बाहर बेखौफ सभी, भीतर डर हर दम है!

परवाज को उठे परिन्दे गिर गये उसी पल,
इनायते-मौसम ज्यादा दुश्मनी कम है!

□

हालात बड़े अजीब, दिल शाद नहीं।
देखता हूं आदमी आबाद नहीं!

वेद औ' कुरान पढ़ने में मशगूल,
जिन्दगी का पहला सबक याद नहीं!

आप फलें-फूलें, पर हमें न रौंदें,
देखिये हम आदमी है, खाद नहीं!

इसी तरह रहा जुल्म, जोर, जब्र तो,
मिलेगा आदमी इसके बाद नहीं।

खुशहाली कैसे हो बयां ग़जल में,
सबके लिए यहां पानी-घास नहीं।

□

देखिये हमसे हुआ है यह कुसूर!
हर बात में कहा न गया, जी हुज़ूर!

वे रोयें-हँसें तो हम रोयें हँसें,
हमें कभी कबूल नहीं ये दस्तूर!

हम चल कर आयें, आप बात न करें,
हमसे सहा नहीं जाता यह ग़रूर।

साथ बैठकर हिकारत से न देखें,
आप बड़े होंगे अपने घर ज़रूर!

आपकी सनक के खिलाफ़ खड़े हुए,
हमें भी आदमी होने का सुरूर!

□

गिर रहे खून के कतरे देखो।
वे कहते कुछ नहीं, अरे देखो!

आवाज क्या चीख तक बेअसर,
सियासत के लोग बहरे देखो!

कैसे कहें खुलकर अपनी बात,
जुबां पर लगे है पहरे देखो!

नया रंग पोत जो आये इधर,
इनके पुराने चेहरे देखो।

किसी की कोई थाह न मिल रही,
लोग हुए इस हद गहरे देखो।

□

ऐसी सुविधाओं से घिर गये लोग।
अपने ही भीतर तक मर गये लोग!

देखते चलते पलड़ा किधर भारी,
कभी इधर तो कभी उधर गये लोग!

कैसे सीधे पहुंचे कोई उन तक,
क़दम-क़दम पर पत्थर धर गये लोग।

सदा साथ रहने के दावे करते,
आओ देखें, आज किधर गये लोग।

उठती लहरें रोके से न रुकेंगी,
हर दौरे-खौफ़ से गुज़र गये लोग।

◻

हवा आयेगी, खिड़कियां खोलो तो सही।
आवाज असर दिखायेगी, बोलो तो सही!

क्या मजाल जो रोक ले बदचलन मौसम,
नाप लोगे आकाश, पंख खोलो तो सही!

लड़े बिना ही हार मानते आये अब तक,
अपने बाजुओं की ताकत तोलो तो सही।

जुल्म की हवेलियां ढह जायेंगी खुद-ब-खुद
एक बार तूफान बनकर डोलो तो सही!

एक नहीं लाखों देंगे साथ तुम्हारा,
अपने भीतर जरा खुशबू घोलो तो सही!



उठ खड़े हुए लोग अत्याचार के खिलाफ़।
पहला पत्थर लीजिये दीवार के खिलाफ़!

आपके हैं लेकिन जुल्म में साथ न देंगे,
किसी की हो, हम तो हैं तलवार के खिलाफ़!

खूब जश्न मना रहे उनके बिक जाने पर,
इधर देखिये, हम खड़े सरकार के खिलाफ़।

सिक्का सीधा गिरे या उलटा, जीत आपकी,
कहीं खेलिये, हम हैं इस किमार[1] के खिलाफ़।

मकानों के नक्शे औ' जिस्मों की नुमाइश,
ग़ैरत बेच कैसे हों हक़दार के खिलाफ़!

□

---

१. जुआ।

सुबह से पहले फिर आयी काली शाम।
यह तबाही बताओ लिखें किसके नाम ?

जिधर से गुजर रहे उजड़ रही बस्तियां,
वे कह रहे—करने आये फैजे-आम !

जिनकी निगाहे-करम से मिटते वजूद,
ऐसे फरिश्तों को तो दूर से सलाम !

पेशे-नजर आज तरक्की के ढंग नये,
हो रहे अंधेरे भी रोशनी के नाम !

देखे आपके निजाम में दौर ऐसे,
भूल गये हम थे कभी किसी के गुलाम !



यह हरामजादा शहर देख तूं।
हवाओं में भरा जहर देख तूं।

भूल जा यहां हुआ था आदमी,
गिद्ध-लूट आठों पहर देख तूं।

देखना-सुनना-कहना सब मना,
सियासत ने किया क़हर देख तूं!

बेकार बदनाम थी रात यहां,
अपने घर काली सहर देख तूं!

कैसे होते हैं सपने हलाल,
देख सकता आज अगर देख तूं!



भीतर और भीतर गये तो देखे ये मंजर।
हर चेहरा मायूस था वहां हर आंख थी तर।

दिन भर दौड़ती-हांफती रहती हैं कुछ सांसें,
फिर भी देखी नहीं फस्ले-बहार जाती उधर!

कहीं डेरे डाले बैठी थी धूप सदियों से,
कहीं छांव चलती मिली दूर से ही बतियाकर।

खुश हुए कल ले इजाजत आकाश नापने की,
आज गिरते पखेरू मौसम के हाथों पिटकर!

पता नहीं किस दिन के लिए सब चुप बैठे हैं,
हवा की दीवारों पर आकाशी छत लिये घर!



जिनकी वजह से आप उदास हैं।
गिनती में वे कुल सौ पचास हैं!

देखो, अब कौन कहां बिक सकता,
उनकी बरम लग रहे क़यास हैं।

खुश हो जिस पर कर दिये दस्तख़त,
यह आपके सपनों की लाश है!

आ जाते हैं वे फिर ललचाने,
होती जब मंजिल बहुत पास है।

चिनगारी से जल जाता जंगल,
आप अंगारे होकर उदास हैं?



अपनी बेकारी ने यह काम किया।
घर छोड़ हर गली तक बदनाम किया।

यहां नहीं, चलो वहां मिल जायेगी,
इसी उम्मीद में भूगोल नाप लिया!

दस्तूरे-दफ्तर देखा है अजीब,
पूछते—पहले कहीं कुछ काम किया?

लाख बार ढूंढा, नाम नहीं पाया,
हमने तो अखबार सुबह-शाम लिया।

अब किससे, कहां, किस तरह करें बात,
इतना समझा हमें सरेआम दिया!

□

चारों तरफ़ जो आज यहां हो रहा है।
उसे देख हर किसी का दिल रो रहा है!

जो भी आगे आया बेनक़ाब करने,
अगले ही पल यहां से गुम हो रहा है!

वे मशगूल हैं अखबारी आंकड़ों में,
बच्चा कब से दूध के लिए रो रहा है!

पहली परवाज, नीचे गिर रहे परिन्दे,
मौसम इस हद मेहरबान हो रहा है!

आज नहीं तो कल मिटेगा दौरे-जुल्म,
जिस किसी ने कहा हो, गजल-गो रहा है!

□

जो हैं बेरहम, उन पर न कुछ रहम कीजिये।
आदमी के दुश्मनों की खबर अब लीजिये।

खुद फंसे तो गिड़गिड़ाना है आदत उनकी,
हाथ आया वक्त न यूं ही जाने दीजिये।

आग भड़कते ही खौफ़ खायेंगे सितमगर,
तबीयत से इन अंगारों को हवा दीजिये।

फ़रियाद करते तो हो गया एक ज़माना,
अब हलक़ में हाथ डाल अपने हक़ लीजिये।

गिरे इमारते-जुल्म, एक हों लड़े तिनके,
भोर का ढंग यही, इतिहास देख लीजिये।

□

यहां आपके ही लोग आपके खिलाफ़ हैं।
कुछ होश में आइये, किस नींद में आप हैं ?

आगे कहां जा रहे आप बिना कुछ देखे,
अंगारे बिछे, ऊपर बस जरा-सी राख है।

चारों दिशाओं से उमड़ रही आंधियां,
किसने कहा आपसे आज मौसम साफ है ?

गले मिलें बेशक, लेकिन जरा सँभलें,
लोगों की नीयत इन दिनों खराब है।

माला पहना चुके, बटोर रहे पत्थर,
लगता उनके मन कोई खुरापात है !

□

भीतर बैठें तो नश्तर-सी यादें होती हैं।
बाहर निकलते ही अब वारदातें होती हैं!

जलसे सजते हैं यहा, हम वे रू-ब-रू हों,
कैसे मिलें, जब बीच तनी कनातें होती हैं!

उनकी हमारी मुहब्बत का है यह रूप नया,
जहां मिलें, पत्थरों से मुलाकातें होती हैं!

जिस दिन से शुरू किया खेल अंगारों का, सुना है—
उनकी बज्म में अब हमारी बातें होती हैं।

सूरज हां भरे आने की, और फिर भोर न हो,
बता, ऐसी कौन-सी काली रातें होती हैं?

□

राख हटी तो अब हुए शोले लोग।
आज है अपनी ताकत तोले लोग।

चारों तरफ़ उठ रही हैं आवाज़ें,
लगता कई दिनों बाद बोले लोग!

फ़ितरत वही है सदा डसने वाली,
आये हैं फिर बदलकर चोले लोग!

उनको कहते आग लगा देंगे हम,
कितने मासूम, कितने भोले लोग!

खुद देखें, न देखें, लेकिन हो भोर,
घूम रहे है लिये हथगोले लोग!



आपका शहर देख सदा सोचा करते हैं।
कब ठहरते हैं लोग, कब बात किया करते हैं ?

दूर से देखते ही रास्ता बदल लेते,
यहां दोस्त ऐसे भी मिला करते हैं !

रोशनी में लगा नुमाइश नंगे जिस्मों की,
फिर उनको क़ीमती लिबास दिया करते हैं !

यहा वहा उठती इमारतों के मालिक,
कितने अरमानों को दबा दिया करते हैं !

चीखते सायरन औ' चौतरफ फैला धुआं,
ऐसे माहौल मे कैसे जिया करते है !



चाहे सिर कलम कर दीजिये।
नहीं होंगे अब चुप लीजिये।

हमने तो सिर्फ सच कहा था,
हम पे हो रहा शक़ लीजिये!

जिनके बूते दम भरें आप,
उनके चेहरे फक् लीजिये!

खुश हो रहे बहुत दूर निकल,
यहां भी हाजिर हम लीजिए!

चारों ओर फैलेगी आग,
शोलों को हवा अब दीजिये।



दौड़ रहे है और हांफ रहे हैं लोग।
झूठे दिलासे फिर बाट रहे है लोग।

भीतर-बाहर हर तरह से पिटे हैं जो,
घूम फिर उनको ही डांट रहे है लोग!

गरूर बढ़ा इतना कि रौंदा धरती को,
आकाश पर चढ़ अब कांप रहे है लोग।

मिलते ही गला पकड़ने की कहते थे,
अब सामने बगलें झांक रहे है लोग।

अब कौन करेगा किसी का यकीन यहां,
जहां भी देखो बन सांप रहे है लोग।

□

वहां दूर क्यों खड़े है, पास आइये।
अब सारे सबूत लेकर साथ आइये।

आप कहते हैं यहां भोर होगी नहीं,
मान लेंगे सूरज की लाश दिखाइये!

हर कोई डूब रहा इस घाट पर आज,
सुनिये, यहां पहरे कुछ खास लगाइये!

बात करने की तमीज भी सीख लेंगे,
इतनी दूर क्यों रखा, पास बुलाइये!

कुछ सांसें सलीब पर भी नहीं झुकेंगी,
यहां बैठे आप बस कयास लगाइये!



चूमने चले नजर आसमान की देख।
अब हिल रही नीव उसी मकान की देख।

कौन सुनेगा घायल चिड़िया की पुकार,
सभी को पड़ी है अपनी जान की देख!

सच कहने वालों का सिर क़लम हो रहा,
यही है उनके वक़्त की बानगी देख।

हमारी तकलीफ़ों का जिक्र करे कौन,
मंच पर जम रही बातें ख़ानगी देख!

किसी सूरत में न बचेंगे महल उनके,
खुल गयी है अब आंख तूफ़ान की देख!

□

आसमां में कोई धुंधला सितारा होगा।
तलाशे भोर का जनमों से मारा होगा।

पहली नजर पड़ते ही मिटते वजूद यहां,
माहौले-खौफ़ में कैसे गुजारा होगा!

हसरते-दीदार वाले पिटकर लौटे हैं,
कल जलसा यहां फिर कैसे दुबारा होगा!

फस्ले-बहार मांग रही है अब कुर्बानी,
मर मिटने वालों में नाम हमारा होगा!

प्यासे दम तोड़ते मिले गंगा के किनारे,
हमने कब सोचा यहां यह नजारा होगा!



चूमने चले नजर आसमान को देख।
अब हिल रही नींव उसी मकान की देख।

कौन सुनेगा घायल चिड़िया की पुकार,
सभी को पड़ी है अपनी जान की देख!

सच कहने वालों का सिर क़लम हो रहा,
यही है उनके वक़्त की बानगी देख।

हमारी तकलीफ़ों का जिक्र करे कौन,
मंच पर जम रही बातें खानगी देख!

किसी सूरत में न बचेंगे महल उनके,
खुल गयी है अब आंख तूफ़ान की देख!

□

आसमां में कोई धुंधला सितारा होगा।
तलाशे भोर का जनमों से मारा होगा।

पहली नज़र पड़ते ही मिटते वजूद यहां,
माहौले-खौफ़ में कैसे गुज़ारा होगा!

हसरते-दीदार वाले पिटकर लौटे हैं,
कल जलसा यहां फिर कैसे दुबारा होगा!

फस्ले-बहार मांग रही है अब कुर्बानी,
मर मिटने वालों में नाम हमारा होगा!

प्यासे दम तोड़ते मिले गंगा के किनारे,
हमने कब सोचा यहां यह नज़ारा होगा!

□

जिस दिन से दवा सच कहने का बीड़ा उठाया है।
हमारे खिलाफ हर रोज़ नया शगूफा आया है।

न सुन सके झूठ तो आप उठ खड़े हुए लोग वहां,
वे कहते—जलसे में पत्थर हमने फिंकवाया है!

पेट की फटकार सुन सब चल पड़े छीनने रोटी,
वे कहते—उन भूखों को हमने जा उकसाया है!

दाब बढ़ा तो यहां-वहां खुद ही फूट पड़े गुब्बारे,
वे कहते—इस घर में बारूद हमने बिछाया है!

सदियों से सोये समुद्र ने तोड़ डाले किनारे,
वे कहते—हमारी वजह से यह बवाल आया है।

□

आपने पुकारा, आ गये हम लीजिये।
ठेठ तक चलेंगे अब साथ हम लीजिये।

आइये, अब अगले सफ़र की बात करें,
तय हुए सफ़र का न कोई ग़म कीजिये।

कुछ देर और हो बेशक, चलेंगे साथ,
हांफ गये तो यहां थोड़ा दम लीजिये।

आपकी हँसी में साथ दिया था हमने,
खुशी से लेंगे, अपने सब ग़म दीजिये।

कल जो होगी भोर, आपकी होगी,
मिटना है तो आज मिटते हम लीजिये।



मत पूछिये, कैसे-कैसे ख्वाब लिये घूमता है वह।
बस इतना जानता हूं, एक आग लिये घूमता है वह।

सलीब, जहर, फांसी, गोली जी भरकर दो दुनिया वालो,
छेनियों से न कटने वाली सांस लिये घूमता है वह!

मजहबी किताबों से खोलते खून वालो, ग़ौर करो,
कौन है, आदमी होने का दाग़ लिये घूमता है वह।

किस तरह, किस वजह गिरा है आदमी का खून बताइये,
चुकता करके ही रहेगा, हिसाब लिये घूमता है वह।

कारण तो बताइये, बेवजह क्यों हैं यहां पाबन्दियां,
सांसों को मुक्त करो! यह आवाज लिये घूमता है वह।

□

सच कहू उनके लिए डर हो गये हम ।
उनकी नजरों में जहर हो गये हम ।

जलसे में जब चली बात राशन की,
वहां लेकर भूख मुखर हो गये हम ।

हरे चश्मे बंटते देखे जब वहां,
शीशा तोड़ते पत्थर हो गये हम !

हवा तक जब कैद होने लगी वहां,
ले सबको साथ बाहर हो गये हम ।

कब तक नहीं टूटेंगे ये किनारे,
साथ जुड़ उछलती लहर हो गये हम !

□

वही ढंग, वही हिसाब चालू है।
किसने कहा मिटा, आज चालू है।

हकीम के हाथों खिलौना सांसें,
मर्ज पता नहीं, इलाज चालू है!

मंच पर घोषित हुआ प्रगतिशील,
घर में पुराने रिवाज चालू हैं!

सही शब्द तो वहीं कहीं खो गये,
बस, अर्थहीन आवाज़ चालू है!

निष्पक्षता के हामी रहे इतने,
मौक़ा मिले तो लिहाज चालू है!

□

बढ़ रही बग़ावत तो देखिये आप ।
हो रही क़यामत तो देखिये आप ।

भोर तक जलने की ठान बैठा है,
दिये की शहादत तो देखिये आप ।

हवेलियों के खिलाफ़ खड़े हुए हैं,
तिनकों की ताक़त तो देखिये आप ।

अभेद्य दुर्ग ढहाने चल पड़ी है,
हवा की हिमाक़त तो देखिये आप ।

अब फौलाद भी पिघल उठेगा यहां,
आग की अदावत तो देखिये आप ।



होती पहले ही यदि आपकी नीयत साफ़।
सच जानें, इतने लोग नहीं होते खिलाफ़।

उस वक्त तो नहीं किया था ज़रा भी खयाल,
सभी गलतियां अब क़बूलने चले हैं आप।

आपको देखते ही ताज़ा हो रहे ज़ख्म,
बहुत ही मुश्किल है, अब कर दें बिल्कुल माफ़।

आज़ादी में यह इज़ाफ़ा आपके हाथों,
अंधेरा दिखाया जिसने भी मांगा जवाब।

किले ढहने के अलावा आपके साथ भी,
वही होगा, जो इतिहास में लिखा है साफ़।

□

हर घर में सड़ांध देती नाली है ।
बता, यह जिन्दगी है या गाली है ।

पीक की तरह थूकने पड़े उसूल,
पैबन्द भरी सत्य की दुशाली है ।

बता, कौन-सा मुंह ले अब घर लौटें,
हर चेहरा आज वहां सवाली है ।

इस तरह कौन चाहेगा अब जीना,
मर कर जीने की आदत डाली है ।

न देना रहा, न लेना बचा बाकी,
बाहर-भीतर सब बिलकुल खाली है ।



चीखं उठे जब देख यहां-वहां बनी लकीर हम।
सभी लोगों की नजरों में हो गये कबीर हम।

रूढ़ियों ने जब सांस को लहूलुहान किया तो,
वहां से निकल आये झंझावातों को चीर हम।

हर सांस घुटती है, यहां हवा तक नहीं आती,
बदलने चले इस दुनिया की सूरत अधीर हम।

आज तक एक हवेली तो खड़ी कर ही लेते,
जिन्दगी समझने की सनक में हुए फकीर हम।

यहां आकर लौट चलना, सुनो है सम्भव तभी,
जब न देखें किसी के आगे-पीछे जंजीर हम।

□

चलो कुछ बुझे-बुझे ही सही।
मन में सपने जगे तो सही।

होंठ तक न हिले जिनके कभी,
हकला कहने लगे तो सही।

बहुत दृढ़ बने दुर्ग उनके,
कुछ-कुछ ढहने लगे तो सही।

बर्फ़ बनकर जम चुके थे जो,
रिस-रिस बहने लगे तो सही।

झूठ के साथ बहुत नंगे थे,
अब कुछ पहने लगे तो सही!



चलेंगे, गिरेंगे, गिरकर सँभल लेंगे।
सदा की तरह अपना ही सम्वल लेंगे।

इतना सफ़र जब अकेले तय कर लिया,
रहे-सहे दो-चार क़दम भी चल लेंगे।

गले तक धँसे ये तब भी नहीं पुकारा,
घुटनों चढ़े दलदल से खुद निकल लेंगे।

ढलान में फिसले तो कोई मिला नहीं,
समतल में ये क़दम आप सँभल लेंगे।

नहीं चाहते दुम हिलाकर शिखर छूना,
जो लेंगे, अपनी क्षमता के बल लेंगे!

□

भर आयी आंखें भी नहीं छलकी हैं कई दफा।
किसने समझा यहाँ उन आंसुओं का फलसफा।

दुनिया ने देखी है उनकी छाया सदा हम पे,
किसे होगा यकीन, उनके कारण हुआ हादसा।

इस तरफ़ जो भी बिखरे, रंग-बदरंग बिखरे;
दूसरी तरफ अब भी रखा है कोरा एक सफ़ा।

कुछ इस तरह बनकर तैयार हुआ है घर अपना,
छांव यहां तक आती नहीं, धूप रहती है सदा।

आपको यक़ीन हो या न हो, लेकिन सच जानिये,
हाथ ऊपर उठा खुशी से मांगी है आज कज़ा!

□

पग-पग पर ढहने की ग्रादत खो गयी ग्रब तो।
सुनो, सच कहने की ग्रादत हो गयी अब तो।

ये सुविधाएं अलग न कर सकेंगी मुझे उनसे,
रगों में बहने की ग्रादत हो गयी अब तो।

कोने में छिपकर रोया नहीं जाता मुझसे,
सरेग्राम कहने की आदत हो गयी अब तो।

फुटपाथ पर नहीं आया बस तभी तक डर था,
तूफां से लड़ने की ग्रादत हो गयी अब तो।

गया वक़्त जब दवाग्रों की थी जरूरत हमें,
हर दर्द सहने की ग्रादत हो गयी ग्रब तो।



दिख रहे बाहर से तो हम-तुम जुड़े-जुड़े ।
लेकिन भीतर से है बहुत उखड़े-उखड़े ।

नापने को नाप लेते हम भी आकाश,
पंख खोलते ही मौसम ने थप्पड़ जड़े ।

इन्तजार की भी तो एक हद होती है,
राखियाने लगे है अंगारे पड़े-पड़े ।

कब समझी हमने तीसरे की चालाकी,
हम तो उम्र भर आपस में ही मरे-लड़े !

सुना है—आज भी गंगा में तो पानी,
प्यासे होंठ लिये उधर तुम, इधर हम खड़े ।



पांव तले जमीं ओ' सिर पर आकाश चाहिए।
जीने के लिए आदमी को विश्वास चाहिए।

बारहों महीने पतझड़ से निभ नहीं सकती,
घड़ी भर के लिए ही सही, मधुमास चाहिए।

अंतहीन अंधेरे पथ पर चल पड़ेंगे, सुनो—
मगर इस सास के साथ कोई सांस चाहिए।

जहां धूल बुहार बैठें, वहीं बसा लें बस्ती,
अपने आस-पास कुछ पानी, कुछ घास चाहिए।

अकेले वर्तमान से भविष्य बन नहीं सकता,
भूलों से सीखने के लिए इतिहास चाहिए।

□

आपको सिर्फ अपनी इज्जत का खयाल है।
हमारे सामने ज़िन्दगी का सवाल है।

सालभर तो पाला करते बड़े प्यार से,
फिर उन्हीं हाथों ईद को करते हलाल हैं!

झुकते पलनों की ओर ही मिले हैं सदा,
समय के साथ आप सधे हुए दलाल हैं।

हमारी गति के बीच बने खड्डे-दर-खड्डे,
ये रूढ़ियां तो आपके लिए ढाल है।

कहीं भी बनी हुई लीक आपको कबूल,
अपने सामने हर क़दम वही सवाल है।

□

घर में छिप जाइये, अच्छा रहेगा।
अब हो चुप जाइये, अच्छा रहेगा।

लोगों को पत्थर चुनते देखा है,
अब इधर न आइये, अच्छा रहेगा।

हर घड़ी लगा है हंगामे का डर,
जलसा न लगाइये, अच्छा रहेगा।

हर मोड़ खड़े लोग इन्तजार में,
बाहर न आइये, अच्छा रहेगा।

हर आदमी हुआ आज आईना,
दूर हट जाइये, अच्छा रहेगा।

□

हमने भूख का यहां ऐसा आलम देखा।
खाली पेट पर पड़ता पांव जालिम देखा।

रात के घर रची जब दावत बड़े ठाट से,
उसमें हमने सूरज को भी शामिल देखा।

हमारे घरों तक यह हवा भी नहीं आती,
उन सभी दयानतदारों से हां, मिल देखा।

बस यूं ही जरा टटोल लीं आपकी जेबें,
लेना किसे, हमने तो आपका दिल देखा।

हर सांस कटती नहीं मामूली वारों से,
हमने चाकू देखा, चाकू का फल देखा।

□

कभी धरना, कभी घेराव, कभी हड़ताल।
हर रोज लगा है यहां एक नया बवाल!

चारों तरफ़ हो रहे धमाकों पर धमाके,
इस नन्ही चिड़िया को जरा जतन से सँभाल।

मेला उठने से पहले भगदौड़ होगी,
सँभालकर रख, कहीं गिर न जाये रूमाल।

समझने-समझाने का है यह रूप नया,
लाठी-पत्थर से आ-जा रहे जवाब-सवाल।

खून-खराबा आदमी के हकों के लिए,
यहां हो रहा आदमी का कितना खयाल!

□

आज मिलकर खुली हवा में सांस तो लो।
तिनका ही सही, जो भी हो, साथ तो लो।

सुना है इस बस्ती में आये फरिश्ते,
हम भी जानें, कौन हैं वे, नाम तो लो।

तहखानों में पूछें तो अब क्या कहें,
हां, हम देंगे बयान, सरे आम तो लो।

उनका पूरा इतिहास लिखा है इसमें,
फिर पढ़ लेना, अभी पर्चा थाम तो लो।

रात का रूप-पाश न रह सकेगा सदा,
निकलेगा सूरज, हिम्मत से काम तो लो।



वे चाहते ऐसा काम मिल जाये।
जिसें किये बिना ही नाम मिल जाये।

इस हद तक लगे हैं उनको पूजने,
यहा सुबह औ' वहां शाम मिल जाये।

जो लिया सदा पिछले दरवाजों से,
चाहने लगे सरेआम मिल जाये।

अब तो दिल मे बची है हसरत यही,
जैसे भी हो, बस इनाम मिल जाये।

काली निगाहों से देख रहे दुनिया,
चाहते है दामन साफ मिल जाये।

□

कुछ भी नहीं हुआ-सा लेकर लौटे हम।
बस, खोखली दिलासा लेकर लौटे हम।

उलझे मुद्दों पर आयोजित परिचर्चाएं,
कुछ और घना कुहासा लेकर लौटे हम।

खुली हवा और खुशबू तलाशने चले,
भीतर कड़ुआ धुआं-सा लेकर लौटे हम।

उमड़े-गरजे तो बहुत बादल, बरसे कम,
मन भीतर खाली कुआं-सा लेकर लौटे हम।

कुछ इस तरह छुआ हर पहलू आपने,
हर पहलू अनछुआ-सा लेकर लौटे हम।

□

नाम पहुंचे उनके, जो खिलाफ हैं।
याद रखिये, उनमें एक आप हैं।

आपके कहने से कौन मानेगा,
आपका चलन नेक और साफ़ है।

आप बेक़सूर साबित नहीं उनसे,
जिनमें दूसरों के दामन दाग़ है।

यह वारदात आपके नाम होगी,
जहां खड़े हैं आप, वहां आग है।

छूटना है तो और को फंसाओ,
यहां का सदा से यही हिसाब है।



ये उम्मीदें कैसे न होंगी बदरंग यार !
आदमी खुद खड़ा जहां बिकने को तैयार !

उजालों की हद से दूर निकल चुके इतना,
सुबह-शाम है सिर्फ अंधेरे का इन्तजार !

देख रहा हूं मैं कफ में गिरता खून यहां,
कैसे कहूं इनसे नहीं अपना सरोकार।

जमाने को हँसे एक जमाना बीत गया,
आजकल सूरत से लगता बेहद बीमार।

भूख के आंगन से हटाओ ये गंदे सिक्के,
गलियों को घर बनाओ, बंद करो बाजार !



आकाश छूती इमारतें बनाने वाले,
सदियों से मिले हमें फुटपाथ के हवाले !

यह किस्मत बदनाम हुई, आपकी बदौलत,
हाथों की हद से दूर रहते है निवाले।

यहां सभी आते है गन्दगी में डूबने,
इस धधकते नरक से बाहर कौन निकाले ?

ऐसे बढ़ती रही उल्फत अँधेरों से तो,
लाख तलाशे, न मिलेंगे कल यहां उजाले !

जैसे भी हो, बदलो बदतर होती सूरत,
खुदगर्ज जमाना, यह सवाल कौन उछाले ?

□

आज यह क्या हुआ, अखबार हो गये लोग।
देखते ही देखते इश्तिहार हो गये लोग।

गया वह वक़्त जब ज़रूरत थी सहारों की,
आज अपने ही पहरेदार हो गये लोग।

उनकी अफवाहों का असर अब क्या होगा,
देखो, खुद तक से खबरदार हो गये लोग।

हवा आयेगी, सोचकर खोल लीं खिड़कियां,
उनको क्या मालूम गुबार हो गये लोग।

बहुत खुश थे, चलो बुझ गयी चिन्गारियां,
राख के ढेर में फिर अंगार हो गये लोग।



माना आज पहरे नहीं है।
किसने कहा खतरे नहीं हैं!

चलने का तो बस दम भरते,
हक़ीकत में ठहरे वहीं हैं।

चीख तक नहीं सुनते हैं जो,
बसते लोग बहरे यहीं हैं।

खबर तक न हो, कर दे हलाल,
लोग इतने गहरे कहीं हैं।

यह बदलाव, बदलाव कैसा,
लोग नये, पैतरे वही हैं।



जब देंगे हम कुछ बयां और।
होंगे लोग कुछ उरियां और।

यहां से बच निकले तो क्या,
सामने मिलेंगे वहां और।

बगावत पे हैं दबी सांसें,
बचकर जायेंगे कहां और?

वहां बुझा दी तो क्या हुआ,
जल उठी, लो आग यहां और!

दम न घुटे, सबको मिले हवा,
आओ कि बसायें जहां और।



घायल परिन्दों की इतनी-सी है कहानी देखो।
उनपे हुई थी मौसम की मेहरबानी देखो।

सबको खुश करने का जादू लेकर निकले आज,
अब गली-गली हो रहे दौरे तूफ़ानी देखो!

ऐसी हरक़तों से हँसा रहे ज़माने को आज,
हँसी की जगह आ रहा आंखों से पानी देखो!

सामने खड़े होने वाले देख रहे अँधेरे,
जमहूरी-सल्तनत की नयी कहानी देखो!

भोर के सभी सपने क्यों हो रहे हलाल यहां,
सवाल पूछ लिया हमने, हुई नादानी देखो!

□

यहां-वहां-जहां आपने सिक्के उछाले हैं।
देखिये, आगे बढ़ हमने ही सँभाले हैं।

साधु की हो या कसाई की, अपना क्या,
हम तो सिर्फ पोस्टर चिपकाने वाले हैं।

नतीजे की परवाह किये बिना, आगे बढ़—
कोई छेड़े, हम तो बहस बढ़ाने वाले हैं।

अपना विश्वास रहा सदा जिस्म ढंकने में,
फिक्र किसे, चोले सफेद हैं या काले हैं।

जान चुके, देखिये उनको न छोड़ेंगे अब,
जिनके कारण हाथों से दूर निवाले हैं।

□

यकीन न हो तो चलो देख लो अभी।
हर किसी के भीतर है सूखी नदी।

यह खौफ, यह खामोशी अजीब नही,
उड़कर देख, मौसम बिगड़ेगा अभी।

सपनों की लाश नही देखी तूने,
ताबीर की बातें करता है तभी।

भीतर उठी आवाज, पर सुनी नही,
इतना कुसूर तो कर चुके हम सभी।

धीरे ही सही, लेकिन फूंक मारो,
बुझते अंगारे खिल जायेंगे अभी।

□

जीने का मज़ा किरकिरा है।
आदमी सांपों से घिरा है।

जाने से पहले सोच ज़रा,
अंधे कुएं का कहां सिरा है ?

बस, एक कदम दूर है मौत,
जब से कफ़ में ख़ून गिरा है।

सोचा—जलाऊं गंदी बस्ती,
दुनिया ने कहा—सिरफिरा है।

वजह की वजह तलाशें आज,
जिस वजह हर कोई गिरा है।



आज हर गली में दंगे हो रहे हैं।
लिबास उतार लोग नंगे हो रहे हैं।

किस उम्मीद से लिपटें दौड़कर गले,
बांहों में फांसी फंदे हो रहे हैं।

जब मांगी दवा तो दुत्कारा गया,
अब लाश के लिए चंदे हो रहे हैं।

सिक्कों की एवज़ ले रहे जिन्दगियां,
मतलब के मारे अंधे हो रहे हैं।

बनाकर अपना, फिर करेंगे हलाल,
देख, लोग कितने गंदे हो रहे हैं।

□

ग़ आदमी क्यों रो रहा है ।
की वजह से यह हो रहा है ।
मुझे न पूछो आ न जाने ये चिराग़ कैसे,
उसे ढूंढ़ो, जिस रा और गहरा हो रहा है ।

चौराहे पे जले तक नहीं पहुंच रहीं वहां,
अब सड़क पे अंधे आदमी बहरा हो रहा है ।

आवाज़ क्या, चीख नहीं मिल रही आंसुओं से,
इस निज़ाम का ह खातिर जलसा हो रहा है ।

ज़माने को फुरसत ने खिड़कियों पे तान पर्दे,
उनकी शोहरत की दिल में दर्द हो रहा है ।

तुम लेट गये घर क
क्या वजह फिर मे

□

देख-देख रोज नये जांच आयोग।
शायद कुछ दिन वहल जायेंगे लोग।

पहले से ही बेहद पिटे हुए हैं,
चीख मत यहां, दहल जायेंगे लोग।

हर वक्त आग की बातें मत कर तू,
मोम के बने, पिघल जायेंगे लोग।

खुशियों के खिलौने लाओ तो सही,
इन्हें देख खुद बहल जायेंगे लोग।

तिनके पहचान रहे अपनी ताकत,
आज नहीं कल कहर ढायेंगे लोग।

□

खिड़किया बंद करने लगे जो सभी।
क्या होगा दुनिया का, सोचा कभी ?

चंद होठों पे है तबस्सुम तो क्या,
ज़माने के अश्कों की सोचो कभी !

बंद कमरों में नहीं हक़ीक़ते-जहां,
सड़कों पे जो हो रहा, देखो कभी !

अब कौन कहां तक साथ ले-दे रहा,
यह इम्तिहां भी हो जाने दे अभी।

इतना मायूस न हो, उठ फूक मार,
राख तले दबे अंगारे गर्म अभी ?



यह माना आकाश में उड़ने लगे अब परिंदे।
लेकिन कैसे मान लें, लोग नहीं हैं अब गंदे।

जमाने का सबसे हसीन ख्वाब है रौशनी,
लेकिन हो रहे हैं फिर वही अंधेरे के धंधे!

अब भी घुटती है सांस यहां, लेकिन क्या करें,
हर किसी को नजर नही आते, ऐसे हैं फंदे!

तेरी गंगा के पानी पर गरूर जमाने को,
अपने ही घर में प्यासे मर रहे तेरे बंदे!

याद आ रही आज नानी की कहानी जिसमें,
राजा को आंखें देकर योगी हो गये अंधे!

□

जब से बरसों पुराना दर्द बिछड़ा है।
तभी से यह मन बहुत उखड़ा-उखड़ा है।

किस्सा-ए-तबस्सुम कैसे करे हम बयां,
अपना तो अश्कों से वास्ता पड़ा है।

आँखों आगे ढह रही इमारत अपनी,
आप कह रहे— जरा पलस्तर उखड़ा है!

फलसफे जो भी पढ़े, तेरे साथ पढ़े,
देख ले हर किताब, सफा वहीं मुड़ा है।

हक़ न छीनो सरेआम ग़ज़ल कहने का,
मेरा जीना-मरना ग़ज़ल से जुड़ा है!



कह दो उनसे जो लाखों जुल्म किया करते है।
हम बीज है और बीज बाग़ी हुआ करते है !

आपका तो सहलाना भी तिलमिला देता है,
भला ऐसे भी किसी के जख्मों को छुआ करते हैं ?

हम तो झुलस रहे एक जमाने से लेकिन अब,
उस आग में तू भी झुलसे, यह दुआ करते है।

हर गली के हर मोड़ पर बर्फ फेंकने वालो !
शोले जो भड़क उठे यूं नही बुझा करते है।

काप उठती है हवेलिया जब भूखे फुटपाथ,
हलक मे हाथ डाल हक लेने को तुला करते है !

□

जब तय किया नहीं चलूंगा लीक पर।
दुनिया बोली—अपना चलन ठीक कर।

बड़े अंदाज़ से पूछते वे हमको—
क्या पाया इस मौसम को रकीब कर?

आ, अब कारणों के कारण तलाशें,
कब तक रोते रहें सिर्फ नसीब पर?

हर आंगन में हों खुशी के फव्वारे,
जी रहे सिर्फ उस दिन की उम्मीद पर।

कहने को लाखों आराम कर दिये,
मगर हम तो हैं आज भी सलीब पर।

□

आपका निजाम ये चलन आम हो रहे हैं।
जूतों के जोर फ़र्शी-सलाम हो रहे हैं।

सभी जानते हैं फँसेंगे लोग बे क़सूर,
गवाह तो यहां मुफ्त बदनाम हो रहे हैं।

तवारीख़ में भी नहीं कहीं ऐसी मिसाल,
अँधेरे [illegible] भी रोशनी के नाम हो रहे हैं।

मुक़ाबले में जो थे सड़ रहे सीखचों में,
जमहूरी-सल्तनत, इन्तखाब हो रहे हैं।

आलमे-आफताब तो है चिराग़े-सहरी,
आपके चिराग़ अब आफताब हो रहे हैं।

